सरोजिनी नायडू

राजकुमार

H
028 5 R 13 S
R13S

INDIAN INSTITUTE OF
ADVANCED STUDY
LIBRARY SIMLA

सरोजनी नायडू

Rajkumar
राजकुमार

CATALOGUED

S. K. Publishers, New Delhi.
एस० के० पब्लिशर्ज, नई दिल्ली-24

H
028 5
R13S

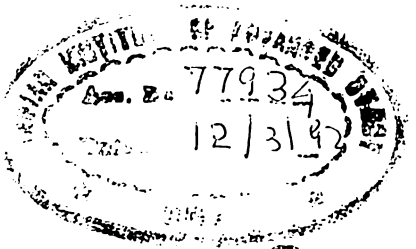

Library IIAS, Shimla
H 028 5 R 13 S
00077934

© प्रकाशक

प्रकाशक : एस० के० पब्लिशर्ज
ए-47, अमर कालोनी, लाजपतनगर
नई दिल्ली-110024

द्वितीय संस्करण : 1991

मूल्य : 8 00 रुपये

मुद्रक : एस० एन० प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

याद नहीं आता, वह कौन-सा सन् था, और कौन-सी तारीख थी। कदाचित् 1930 और 1935 के बीच का कोई सन् था, मैं उन दिनों अपनी जन्मभूमि से इलाहाबाद आ चुका था। नमक आन्दोलन बन्द हो चुका था, पर स्वाधीनता के आन्दोलन की आंधी बन्द नहीं हुई थी। किसान आन्दोलन को लेकर सत्याग्रह हो रहा था। नेताओं की गिरफ्तारियां भी हो रही थीं।

उन्हीं दिनों एक दिन इलाहाबाद के पुरुषोत्तम दास पार्क में कांग्रेस की एक विशाल सभा में स्वनामधन्या स्वर्गीय श्रीमती सरोजनी नायडू का भाषण हुआ। उनका भाषण सुनने के लिए मैं भी उस सभा में उपस्थित था। यह प्रथम अवसर था, जब मैंने उनका दर्शन किया था, और उनके मुख से उनकी ओजस्विनी वाणी सुनी थी। उसके पश्चात् तो मैंने कई बार उनके दर्शन किए और कई बार मुझे उनका व्याख्यान भी सुनने का अवसर प्राप्त हुआ।

श्रीमती सरोजनी नायडू का व्याख्यान राजनीतिक मंच से सुना था, पर उनकी वाणी बड़ी रसमय और साहित्यिक थी। उसमें गंभीरता थी, उसमें ओज था। ऐसा प्रतीत होता था, मानो जिस हृदय से वह वाणी निकल रही थी, उसमें सरसता का सागर लहरा रहा था, और उसमें कोई महान कवि बैठा हुआ था।

सचमुच सरोजनी नायडू के हृदय में एक महान् कवि बैठा हुआ था। ऐसा महान् कवि बैठा हुआ था, जिसमें भावों की अद्भुत सरसता थी, कल्पनाओं का माधुर्य था। भाषा तथा शब्दों

का सौष्ठव था। यह विधाता के विधान का चमत्कार ही है कि, श्रीमती सरोजनी नायडू ने राजनीति में प्रवेश किया और राजनीति में प्रवेश करके अतुल कृति प्राप्त की, नहीं तो उनके प्रारम्भिक जीवन से यही लगता था कि वे एक महान् कवि होंगी। ऐसा कवि होंगी जो कई सौ वर्षों के लिए संसार को कुछ दे जाएंगी।

श्रीमती सरोजनी नायडू 15-16 वर्ष की अवस्था में ही अपने भावों को कविता के सांचे में ढालने लगीं। उस समय की लिखी हुई उनकी एक कविता का भावार्थ नीचे उद्धृत कर रहा हूं। उसे पढ़कर अनुमान लगाया जा सकता है कि उनके हृदय में जो महान् कवि बैठा हुआ था, उसका भविष्य बड़ा परमोज्ज्वल था—

एक बार मैं खड़ी थी निशा-स्वप्न में,
अकेली जादुई वन के उजाले में,
आत्मा तक डूबी हुई लाल फूलों-जैसे सपनों में;
गाने वाले पक्षी थे सत्य के दूत,
झिलमिलाते सितारे थे सत्य के दूत,
बहते हुए झरने थे शान्ति के दूत,
उस जादुई वन में, नींद के उस देश में।

उन्हीं दिनों की लिखी हुई एक दूसरी कविता इस प्रकार है—

अकेले उस जादुई वन के उजाले में
जाने मैंने प्रेम के दूत के सितारे
मंडराते और चमकते मेरे कोमल यौवन के चारों ओर;
और सुना मैंने गीत सत्य के दूतों का;
बुझाने अपनी कामना झुकी मैं

शांति के दूतों के बहते हुए झरनों पर
उस जादुई वन में, नींद के उस देश में।

17-18 वर्षीया सरोजनी के जिस हृदय से ऊपर लिखी हुई कविताओं की सरस निर्झरनी फूटी थी, कौन कह सकता था कि उसमें राजनीति के मरुस्थल की गर्म हवाएं चलेंगी। एक बात और थी, जिसे देखते हुए यह सोचा भी नहीं जा सकता था कि उनका राजनीति में प्रवेश होगा।

सरोजनी नायडू के माता-पिता बड़े कल्पनाशील थे। उनके पिता तो अंग्रेजी के बहुत बड़े विद्वान थे। वे दार्शनिक भी थे। वे दिन-रात उस अतीन्द्रिय जगत के बारे में सोचा करते थे, जो सूक्ष्म है और जो कल्पनामय है। वे उसी प्रकार का साहित्य भी पढ़ते थे। उनकी मां के हृदय में भी सरसता और मधुरता का भंडार था। वे अपने पति की तरह दार्शनिक तो नहीं थीं, पर मधुरकल्पनाशील अवश्य थीं।

कल्पनाओं और मधुर भावों के ही वातावरण में सरोजनी नायडू का जन्म और पालन-पोषण हुआ था। उनके पिता उन्हें प्रारम्भ से ही अंग्रेजी की शिक्षा दे रहे थे, अंग्रेजी के कवियों की सरस पंक्तियां पढ़ाया करते थे। यह सब होने पर भी भविष्य का देवता सरोजनी को राजनीति के मैदान में खींच ले गया। राजनीति मरुस्थल के समान होती है, जिस प्रकार मरुस्थल से चारों ओर रेत ही रेत होती है, उसी प्रकार राजनीति में भी चारों ओर केवल शुष्कता ही शुष्कता होती है, पर सरोजनी के हृदय पर उस शुष्कता का प्रभाव रंचमात्र भी नहीं पड़ा। वे राजनीति में जब और जहां रहीं, उसकी शुष्कता को सरसता में बदलती रहीं; मधुरता का रूप प्रदान करती रहीं।

श्रीमती सरोजनी नायडू ने राजनीति में प्रवेश करके महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया था। उनकी गणना चोटी के नेताओं में

की जाती थी। वे कांग्रेस की वर्किंग कमेटी की सम्मानित सदस्या थीं। वे जब वर्किंग कमेटी की बैठकों में भाग लेतीं तो वातावरण को अपने मधुर भावों और मधुर हंसी से सरस बनाती रहती थीं।

श्रीमती सरोजनी नायडू के स्वर्गवास पर स्वर्गीय श्री नेहरू ने कहा था—सरोजनी नायडू सरसता और मधुरता की प्रतिमूर्ति थीं। वे जब और जहां रहती थीं, सरसता और मधुरता का सागर बहाया करती थीं वे और उनकी सरस भावनाएं ऐसी नहीं हैं, जो भूल सकें या भुलाई जा सकें।

माता-पिता और जन्म

श्रीमती सरोजनी नायडू के पिता का नाम अघोरनाथ चट्टोपाध्याय और माता का नाम बरदा सुन्दरी था। अघोरनाथ बंगाल के एक गांव के, जिसका नाम ब्रह्मनगर था निवासी थे। वे हैदराबाद में कार्यरत थे। उनका मुख्य विषय रसायन था। वे रसायनशास्त्र के पंडित थे। उन्होंने हैदराबाद रहकर रसायन सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण खोजें की थीं। अघोरनाथ को अपने पूर्वजों पर बड़ा गर्व था। उनके पूर्वज केवल विद्वान ही नहीं थे उन्होंने परमात्मा सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण ज्ञान भी प्राप्त किया था। लौकिक और पारलौकिक—दोनों प्रकार के अनुभवों के क्षेत्र में उनकी प्रसिद्धि थी।

अघोरनाथ चट्टोपाध्याय ब्रह्मसमाजी थे। उन्होंने ब्रह्मसमाज के संस्थापक केशवचन्द्र सेन से दीक्षा ली थी। उनकी पत्नी के मन में भी ब्रह्मसमाज के प्रति अधिक आस्था थी। उनकी पत्नी ब्रह्मसमाज द्वारा स्थापित आश्रम में भी रह चुकी थी।

अघोरनाथ कई भाषाओं के विद्वान थे। वे बंगाली और अंग्रेजी के पंडित तो थे ही, जर्मन, फ्रेंच और हिब्रू आदि भाषाएं भी जानते थे। केवल जानते ही नहीं थे, उनकी उनमें अच्छी गति भी थी।

अघोरनाथ की कुल आठ सन्तानें थीं। सरोजनी नायडू उनमें सबसे बड़ी थीं। सरोजनी नायडू के लेखानुसार उनके पिता का जीवन बड़ा असफल था। जीवन की असफलताओं ने उन्हें निराश कर दिया था। वे दार्शनिक भी थे। और निराशावादी दार्शनिक विचारों में डूबे रहते थे।

1879 ई० की 13 फरवरी को हैदराबाद में श्रीमती सरोजनी नायडू का जन्म हुआ था। जिस समय उनका जन्म हुआ था, उस समय उनके पिता निराशावादी नहीं थे, क्योंकि उस समय उनका परिवार बहुत छोटा-सा था। उन्होंने अपने जीवन के मार्ग पर चलना आरम्भ ही किया था। उनके मन में उमंगें भी थीं और कामनाएं भी थीं, पर इसका यह तात्पर्य नहीं है कि, उनके विचारों में विकार था। उन्होंने अपने जीवन के प्रारम्भ में ही ब्रह्मसमाज में दीक्षा ले ली थी, अतः विचारों की पवित्रता का तो उनका प्रारम्भ से ही साथ था।

पर ज्यों-ज्यों अघोरनाथ के घर में सन्तानों की वृद्धि होने लगी, त्यों-त्यों उनकी निराशाओं में भी वृद्धि होने लगी। जीवन के अन्तिम दिनों में तो वे पूर्ण रूप में निराश हो गए थे।

बाल्यावस्था

सरोजनी के पिता अघोरनाथ एक अच्छे पद पर नियुक्त थे। उन्हें अच्छा वेतन मिलता था। सस्ती का जमाना था। अतः कहा जा सकता है कि लौकिक दृष्टि से उनके जीवन में कोई अभाव नहीं था। वे पवित्र विचारों के ऊंचे हृदय के आदमी थे। उनकी पत्नी भी सुशीला और अच्छे विचारों की थीं। अतः कहा जा सकता है कि उनके गार्हस्थ जीवन में सुख और शांति रही होगी।

अघोरनाथ की कुल आठ सन्तानें थीं। सरोजनी अपने भाई-बहनों में सबसे बड़ी थीं अतः कहा जा सकता है कि जब तक उनके दूसरे भाई-बहनों का जन्म न हुआ होगा, उन्होंने अकेले ही अपने माता-पिता के प्यार और स्नेह का उपभोग किया होगा। इस बात को सामने रखकर हम कह सकते हैं कि उनका शैशव प्यार और सुख के वातावरण में व्यतीत हुआ।

किन्तु सरोजनी ज्यों-ज्यों उम्र की सीढ़ियों पर चढ़ने लगीं और ज्यों-ज्यों उनके हृदय में ज्ञान का सूर्य पैदा होने लगा, त्यों-त्यों उन्हें प्राप्त सुख और स्नेह में कमी भी आने लगी। इस बात को यों भी कह सकते हैं कि ज्यों-ज्यों उनके पिता के जीवन में असफलता आने लगी और ज्यों-ज्यों उस असफलता के कारण वे निराश होने लगे, त्यों-त्यों सरोजनी के जीवन के सुख की धारा भी सूखने लगी। अर्थात् त्यों-त्यों वे भी दुःख और निराशा का अनुभव करने लगे।

सरोजनी के पिता अघोरनाथ शिक्षाशास्त्री भी थे। उनका कई शिक्षण संस्थाओं से सम्बन्ध था। केवल सम्बन्ध ही नहीं था, उन्होंने कई शिक्षण संस्थाएं स्थापित भी की थीं। वे राजनीतिज्ञ भी थे। कांग्रेस के मेम्बर भी थे। राजनीति में भाग लेने के ही

कारण एक बार उन्हें हैदराबाद से निकाल दिया गया था, पर फिर वे बुला लिये गए थे।

कई संस्थाओं से सम्बन्धित होने के कारण उनके घर में मेहमानों का आना-जाना लगा रहता था। ऐसा कोई दिन खाली नहीं जाता था, जब उनके घर आठ-दस मेहमान न आते हों। वरदा सुन्दरी का तवा कभी ठंडा नहीं होता था। डेगची सदा चूल्हे पर चढ़ी ही रहती थी। तरह-तरह का खाना बनता था, और खूब बनता था।

बचपन में सरोजनी का जीवन उन मेहमानों के बीच में बड़े आनन्द से बीतता था। वे मेहमान भिन्न-भिन्न जातियों और संस्कृतियों के होते थे। अतः उनके साथ सरोजनी प्रतिदिन अच्छा खाना तो खाती ही थीं, भिन्न-भिन्न संस्कृतियों का ज्ञान भी प्राप्त करती थीं। उन्होंने जातीय और सांस्कृतिक एकता का पाठ, अपने घर आने वाले मेहमानों से ही पढ़ा था। स्वादिष्ट भोजन करने की आदत भी उन्हें उन मेहमानों से ही मिली थी।

बचपन में सरोजनी का घर कैसा था और उनके घर में किस तरह मेहमान आते थे—इसका कुछ-कुछ अनुमान नीचे की पंक्तियों से लगाया जा सकता है, जो उनके कवि भाई की लिखी हुई है—"ज्ञान और संस्कृति का संग्रहालय, सम्मिश्र अद्भुत लोगों से भरा हुआ चिड़ियाघर जिनमें से कुछ रहस्यवाद की ओर भी झुके हुए थे—क्योंकि हमारा घर सबके लिए एक समान खुला हुआ था।"

इस प्रकार सरोजनी का बचपन ज्ञान और संस्कृत के वातावरण में व्यतीत हुआ। बचपन में उन्हें मधुर प्यार तो मिला ही था। सांस्कृतिक ज्ञान भी प्राप्त हुआ था। उनमें जो जागृत चेतना थी; उसका अंकुर बचपन में ही उनके हृदय में फूट उठा था।

शिक्षा

सरोजनी के पिता अघोरनाथ शिक्षा-प्रेमी थे। उन्होंने स्वयं एडिनबरा में जाकर रसायनशास्त्र की ऊंची शिक्षा प्राप्त की थी। वे हैदराबाद कालेज के प्राचार्य पद पर नियुक्त थे। यही कालेज आगे चलकर उस्मानियां विश्वविद्यालय के रूप में परिणत हो गया था।

अघोरनाथ ने शिक्षा सम्बन्धी कई संस्थाएं भी खोली थीं। वे स्त्री शिक्षा के भी बड़े प्रेमी थे। उन्होंने हैदराबाद में स्त्रियों की शिक्षा के लिए एक अलग संस्था स्थापित की थी। उनकी पत्नी बरदा सुन्दरी स्वयं एक सुशिक्षित महिला थीं। वे कई भाषाएं जानती थीं।

कहना ही होगा कि सुशिक्षित माता-पिता की संतान होने के कारण सरोजनी बचपन में ही पढ़ने-लिखने लगी थीं। उनके माता-पिता परिवार के लोगों से बंगाली में और नौकरों से तेलुगू में बातचीत किया करते थे। अतः सरोजनी ने बड़ी सरलता से बंगाली और तेलुगू सीख ली थी। उनके पिता उन्हें अंग्रेजी पढ़ाना चाहते थे, पर उनका मन अंग्रेजी पढ़ने में बिल्कुल नहीं लगता था। फलस्वरूप एक दिन उनके पिता ने उन्हें एक कमरे में बन्द कर दिया। इस सजा का परिणाम हुआ, कि सरोजनी का मन अंग्रेजी की ओर आकृष्ट हो गया। उन्होंने मन-ही-मन प्रतिज्ञा की कि वह अब अंग्रेजी ही पढ़ेगी।

सरोजनी की शिक्षा अंग्रेजी में होने लगी। वे बचपन में अंग्रेजी के साथ ही साथ बंगाली, उर्दू और तेलुगू भी जानती थीं। उनके पिता उन्हें महान गणितज्ञ या महान वैज्ञानिक के रूप में देखना चाहते थे। वे इसी बात को सामने रखकर उन्हें शिक्षा भी दिला रहे थे, पर उनकी आशाएं पूरी नहीं हुईं, क्योंकि

सरोजनी गणितज्ञ और वैज्ञानिक—दोनों में से एक भी नहीं बनीं। वे बनीं राजनीतिज्ञ—महान राजनीतिज्ञ।

सरोजनी ने अपनी शिक्षा के सम्बन्ध में स्वयं इस प्रकार लिखा है—"मैं नहीं सोचती कि मुझे बचपन में कविता लिखने की कोई विशेष चाह थी यद्यपि मेरा स्वभाव बहुत कल्पनाशील और स्वप्नदर्शी था। मेरे पिता की आंखों के सामने होने वाली मेरी शिक्षा-दीक्षा गम्भीर और वैज्ञानिक तरीके की थी। उनका निश्चय था कि मैं या तो एक महान गणितज्ञ बनूं या वैज्ञानिक; किन्तु बलवती हुई मेरी कवि-वृत्ति, जो मैंने उनसे और अपनी माता से भी (जिन्होंने अपनी युवा अवस्था में कुछ मधुर बंगाली गीत लिखे थे) उत्तराधिकार में पाई थी। एक दिन जब मैं ग्यारह वर्ष की थी, मैं बीजगणित के एक सवाल के ऊपर से आहें भर रही थी, वह ठीक नहीं रहा था; किन्तु एकाएक उसकी जगह एक पूरी कविता मुझे सूझ गई। मैंने उसे लिख डाला। उस दिन से मेरा कवि-जीवन प्रारम्भ हो गया। तेरह वर्ष की अवस्था में मैंने एक लम्बी कविता लिखी 'एल लेडी ऑफ दी लेक'—छह दिन में तेरह सौ पंक्तियां। तेरह वर्ष की अवस्था में मैंने दो हजार पंक्तियों का नाटक लिखा—एक सम्पूर्ण भावनामय कृति, जिसे मैंने बिना सोचे-विचारे क्षणोन्माद में ही लिखना शुरू कर दिया था, केवल अपने चिकित्सक की उपेक्षा के लिए, जिन्होंने कहा था कि मैं बहुत बीमार हूं और मुझे पुस्तक को छूना भी नहीं चाहिए। करीब इसी समय मेरा स्वास्थ्य स्थायी रूप से बिगड़ गया और मेरा नियमित अध्ययन बन्द हो जाने के कारण मैं अतृप्त रूप से पढ़ती ही रहती थी। मेरा अनुमान है कि मेरा पढ़ने का अधिकतम हिस्सा चौदह और सोलह वर्षों के बीच में था। मैंने एक उपन्यास लिखा, दैनंदिनियों अनेक भाग लिखे; मैं उन दिनों अपने विषय में गंभीरता से सोचती थी।"

उन दिनों हैदराबाद में लड़कियों की शिक्षा के लिए कोई अच्छा स्कूल नहीं था। अतः सरोजनी के पिता ने पढ़ने के लिए उन्हें मद्रास भेज दिया। उन्होंने बड़े परिश्रम के साथ पढ़कर मद्रास विश्वविद्यालय की मैट्रिक परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की। उन्हें परीक्षा में जितने अंक प्राप्त हुए थे उतने उससे पहले किसी के नहीं हुए थे।

उन दिनों किसी लड़की का मैट्रिक परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास करना एक आश्चर्य की बात थी। सरोजनी नायडू ने जब प्रथम श्रेणी में परीक्षा पास की, तो उसके लिए उनकी चारों ओर बड़ी प्रशंसा की गई। वे लिखती हैं—ईमानदारी की बात तो यह है कि, उन्हें वह प्रशंसा बिल्कुल पसन्द नहीं आई।

मैट्रिक की परीक्षा पास करने के बाद सरोजनी ने परीक्षाएं पास करना बन्द कर दिया। यद्यपि उनके पिता चाहते थे कि वे नियमित रूप से अपनी पढ़ाई जारी रखें, पर उनका मन और आगे की पढ़ाई में नहीं लगता था। वे पढ़ाई-लिखाई छोड़कर गीत लिखने लगीं। उन्होंने बहुत से छोटे-छोटे और लम्बे-लम्बे गीत लिखे, जो बड़े सरस और भावपूर्ण थे।

सरोजनी इसके पहले उपन्यास, नाटक और डायरियां भी लिखा करती थीं। पर जब वे गीत लिखने लगीं, तो उन्होंने सब कुछ छोड़ दिया। काफी दिनों बाद वे यूरोप गईं और उन्होंने लन्दन में शिक्षा प्राप्त की। उन्होंने अंग्रेजी साहित्य का अध्ययन बड़ी गहराई के साथ किया। लन्दन से लौटने के पश्चात् साहित्यिक जीवन की डोर उनके हाथों से छूट गई। उन्होंने अपने आप को राजनीति की लहरों में डुबो दिया। इस तरह डुबो दिया कि वे चारों ओर से खिंचकर, केवल राजनीति की ही रह गईं।

सरोजनी ने लंदन में पढ़कर कोई उपाधि प्राप्त नहीं की थी,

पर उन्होंने ज्ञान और अनुभव अवश्य प्राप्त किए थे। उन्होंने लन्दन में रहते हुए वड़े-बड़े साहित्यिकों से परिचय प्राप्त किया था, और उनसे बहुत कुछ सीखा भी था। 18 वर्ष की उम्र में जब वे लन्दन से लौटकर भारत आईं, तो उनके हृदय में नये और गंभीर ज्ञान का उदय हो चुका था।

कविता की रचना

1892 ई० में सरोजनी हाई स्कूल की परीक्षा पास करने के वाद मद्रास से हैदराबाद बापिस आ गई थीं। वे लगभग तीन वर्ष तक अपने माता-पिता के साथ रहीं। उनके यह तीन वर्ष बड़े ही सुख और शान्ति के व्यतीत हुए थे।

सरोजनी के घर प्रायः मेहमानों का आना-जाना लगा रहता था। रोज ही नये-नये मेहमान आते थे। कुछ ऐसे भी मेहमान होते थे, जो कई दिनों तक रहते थे। सरोजनी को उन मेहमानों से बातें करने का अवसर मिलता था। उनके पिता के साथ उनकी जो बातचीत होती थी, उसे भी वे सुना करती थीं।

सरोजनी का घर सुकुमार कल्पनाओं का घर था। उनके माता-पिता मृदुल स्वभाव के तो थे ही। उनके घर जो मेहमान आते थे, वे भो अच्छे विचारों के होते थे। सरोजनी बचपन से ही अच्छे और कोमल विचारों के वातावरण में रहती आई थीं। अतः मैट्रिक की परीक्षा पास करने के बाद उनके हृदय में कविता की धारा फूट पड़ी, और वे कविताएं लिखने लगीं।

'सरोजनी 1892 ई० से लेकर 1895 ई० तक अपने माता-पिता के साथ हैदराबाद में रहीं। इन तीन वर्षों में उन्होंने कई

कविताएं लिखीं। उन कविताओं में कुछ तो छोटी थीं और कुछ बड़ी लम्बी थीं। यद्यपि वे कविताएं उनके प्रारम्भिक जीवन की थीं, पर उनमें भावों, कल्पनाओं, भाषा और शब्दों का अपूर्व सौष्ठव था।

सरोजनी के पिता उनकी कविताओं को देखकर बहुत प्रसन्न होते थे। वे स्वयं उनके प्रकाशन का प्रबन्ध भी करते थे। हैदराबाद के निवास काल से उनकी कई कविताएं अंग्रेजी पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई थीं और बहुत पसन्द की गई थीं। 1895 ई० में सरोजनी को पढ़ने के लिए लंदन भेजा गया। उस समय उनकी अवस्था 15-16 वर्ष की थी। वे लगभग दो वर्षों तक लंदन में रहीं। इन दो वर्षों में उन्होंने अंग्रेजी साहित्य का अध्ययन तो किया ही, अंग्रेजी में कविताएं भी लिखीं। वे अंग्रेजी के बड़े-बड़े कवियों से भी मिलीं। 1898 ई० में जब वे भारत लौटकर आईं, तो उनकी उम्र अठारह वर्ष की हो चुकी थी। उनका अंग्रेजी का ज्ञान परिपक्व तो हो ही गया था, उन्हें अत्यधिक अनुभव भी प्राप्त हो चुके थे। उन दिनों उनके माता-पिता उनके विवाह के प्रश्न को लेकर अधिक व्यस्त थे।

विवाह

सरोजनी जिन दिनों हैदरावाद में अपने पिता के साथ रहती थीं, उन्हीं दिनों उनका ध्यान डा० नायडू की ओर आकर्षित हुआ था। उन दिनों डा० नायडू की उम्र 25-26 वर्ष की थी। वे विधुर थे। सरोजनी का ध्यान जब उनकी ओर गया, तो वह प्रेम के रूप में बदल गया। स्वयं डा० नायडू भी उनसे प्रेम करने

लगे। सरोजनी और डा० नायडू—दोनों ने विवाह-सूत्र में बंधने का निश्चय किया।

सरोजनी के पिता को जब यह बात मालूम हुई, तो उन्होंने अस्पष्टतः इस विवाह को अस्वीकार कर दिया। इसके दो कारण थे। एक तो यह कि डा० नायडू विधुर थे, और उस समय सरोजनी की अवस्था बहुत कम थी। उनके पिता छोटी उम्र में लड़कियों का विवाह करने के बिलकुल विरुद्ध थे। दूसरी बात यह कि वे बंगाली ब्राह्मण थे, और डा० नायडू की जाति उनसे भिन्न थी।

अघोरनाथ के अस्वीकार कर देने से उन दिनों विवाह तो नहीं हुआ, पर सरोजनी और नायडू के हृदय में प्रेम की जो धारा फूटी थी, वह सूखी भी नहीं। वह बराबर बहती रही और गहरी भी होती रही।

1895 ई० में सरोजनी निजाम से वजीफा लेकर पढ़ने के लिए लंदन चली गयीं। वे 1808 ई० के सितम्बर महीने के पहले तक लंदन में रहीं। लंदन के प्रवास काल में भी उनका नायडू के साथ पत्र-व्यवहार होता रहा। उस पत्र-व्यवहार के परिणामस्वरूप सरोजनी और डा०नायडू के बीच का प्रेम अधिक परिपुष्ट हो गया। दोनों एक-दूसरे के और भी अधिक निकट आ गये।

1898 ई० के सितम्बर महीने में सरोजनी लौटकर भारत आईं। उनके घर लौटने पर पुनः उनके विवाह का प्रश्न जोरों से उठा। पहले तो उनके माता-पिता राजी नहीं होते थे, पर उनकी दृढ़ता के सामने उन्हें झुकना ही पड़ा। फलतः सरोजनी और डा० नायडू 1898 ई० की 2 सितम्बर को विवाह-सूत्र में बंध गए।

इस विवाह की अखबारों में बड़ी चर्चा हुई, क्योंकि उन दिनों

अन्तर्जातीय और अन्तर्प्रान्तीय विवाह करने को कौन कहे, लोग उसकी बात भी नहीं सोचते थे। उन दिनों ब्राह्मण लड़की का विवाह, ब्राह्मण लड़के के साथ हो सकता था, पर किसी हिन्दू लड़की का विवाह किसी हिन्दू लड़के के साथ नहीं हो सकता था। इसी प्रकार बंगाल प्रान्त में पैदा हुई लड़की का विवाह बंगाल प्रान्त में ही हो सकता था, तमिल प्रान्त में पैदा हुए लड़के के साथ नहीं हो सकता था। अतः सरोजनी और डा० नायडू का विवाह लोगों को एक बड़े आश्चर्य की बात मालूम हुई।

विवाह के बाद सरोजनी हैदराबाद में अपने पति के साथ रहने लगीं। वे आजीवन हैदराबाद में रहीं। हैदराबाद ही स्थायी रूप से उनका निवास स्थान था।

दाम्पत्य जीवन

विवाह के बाद कुछ वर्ष सरोजनी के जीवन के दिन बड़े सुख और शान्ति के साथ बीते। उनके पति डा० नायडू एक सुशिक्षित युवक थे। उनके ऊंचे विचार थे। वे सरोजनी को बहुत प्यार करते थे। स्वयं सरोजनी भी उन्हें बहुत चाहती थीं। यद्यपि दोनों की जाति, दोनों की भाषा और दोनों का प्रान्त अलग-अलग था, पर दोनों के अतुल प्रेम ने उस अलगाव का अन्त कर दिया था। और दोनों शरीर और प्राण की तरह रहते थे।

1901 ई० में सरोजनी का बालक पैदा हुआ—जयसूर्य। उसके बाद उनके 3 और बच्चे पैदा हुए—पद्मा नायडू, रणधीर और लीलामणि। सरोजनी का घर बालकों के सुमधुर स्वरों में गुंजित हो उठा। केवल घर ही नहीं, उनका जीवन भी। पति का

अतुल प्यार और बालकों का मधुर स्वर गुंजन। वे अपने जीवन में स्वर्ग के आनन्द का अनुभव करने लगीं।

सरोजनी ने अपने एक पत्र में, जिसे उन्होंने लंदन के अपने एक हितैषी के पास भेजा था। अपने उस सुख की चर्चा इस प्रकार की है—"मैंने अपने-आपको सामान्य और दूसरों के समान हल्का-फुल्का रहना सिखला दिया है। हर कोई सोचता है कि मैं कितना अच्छी और खुश हूं, इतनी बहादुर; सभी सामान्य चीजें मुझे आराम देती हैं। मेरी मां समझती है मुझे 'केवल एक शान्त बच्ची'। मैंने भी प्रति-पल जीवन बिताने का सूक्ष्म दर्शन सीख लिया है। हां, यह एक सूक्ष्म दर्शन है यद्यपि यह एक भोगवादी सिद्धान्त प्रतीत होता है; खाओ, पियो और मस्त रहो।"

सरोजनी के घर में प्रेम, सुख और शान्ति का जो पराग उड़ा करता था, उससे उनका हृदय सुवासित हो उठा, उनके हृदय में जो कवि का स्रोत फूटा था, उसके कारण वह झल-झला कर बह निकला। वे बड़े उत्साह और बड़ी तन्मयता से कविताएं लिखने लगीं। उन्होंने धीरे-धीरे कई कविताएं लिखीं। उनकी कविताएं पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं। उनकी दो-तीन पुस्तकें भी छपीं, जो बहुत पसन्द की गईं।

धीरे-धीरे सरोजनी का नाम अंग्रेजी के कविता जगत में चारों ओर फैल गया। वे एक प्रतिष्ठित कवयित्री समझी जाने लगीं। उनकी चारों ओर प्रशंसा होने लगी। उनसे भेंट, मुलाकात करने वालों की संख्या भी बढ़ गई। उनका घर सबके लिए खुला रहता था। उनके घर जो भी आता था, वे उनसे बड़े प्रेम से मिलती थीं।

नीचे हम सरोजनी की कुछ कविताएं सामने रख रहे हैं। ऐसी कविताओं को सामने रख रहे हैं, जिनके कारण बड़े-बड़े विद्वान भी उनकी प्रशंसा करते थे—

(1)

पुरोहितों धर्मगुरुओं के लिए
उनके सिद्धान्तों का आनन्द;
राजाओं और सेनानियों के लिए
वीर कर्मों का यशोगान;
शान्ति, विजित के लिए;
और आशा बलवान हेतु—
मेरे लिए तो, मेरे स्वामी!
उल्लास ही हो गीत का!

(2)

'दुर्बल थे हमारे हाथ, पर
सेवा हमारी थी सुकोमल;
अंधेरे में हमने देखा सपना
तुम्हारी छटा के प्रभात का;
चुपचाप हम कोशिश कर रहे थे;
कल के उल्लास के लिए;
और सींचा था तुम्हारे बीजों को
अपने दुःखों के कुओं से;
हमने मेहनत की, समृद्ध बनाने
तुम्हारे जागने के प्रफुल्ल क्षण में;
खत्म हुआ हमारा रतजगा;
देखो, निकल रहा दिन का उजाला;

(3)

देखो कैसा दीप्त है चित्र आकाश कपोत-कंठ के समान
रत्न जटित अंगारों से मणि-मुक्ताओं के।
देखो धवल सरिता चमकती-दमकती
हस्ति दन्त-जैसी मुड़ती नगर-द्वार के बदन से।

गोखले के सम्पर्क में

भारत के नरम विचार के नेताओं में गोपाल कृष्ण गोखले का नाम सदा बड़े सम्मान के साथ लिया जायेगा। वे महान देश-भक्त और महान सद्विचारक थे। यद्यपि उन्होंने अन्यान्य उग्र-वादी नेताओं की तरह भारतीय स्वतन्त्रता के लिए युद्ध नहीं किया, पर उन्होंने भारतीय स्वतंत्रता के लिए एक ऐसा दल तैयार किया, जिसने बड़ी वीरता के साथ भारतीय स्वतन्त्रता के लिए युद्ध करके अपने स्वतन्त्रता का पालन किया था।

गोखले जहां देशभक्त थे, वहां अनन्य समाजसेवी भी थे। वे गरीबों और दलितों के प्राण थे। कहना होगा कि गांधी जी ने जो राजनीतिक कार्य किये, उसके लिए भूमि गोखले ने ही तैयार की थी। गोखले ने एक ऐसी संस्था कायम की थी, जो देशसेवियों और समाजसेवियों को तैयार करती थी। और देश तथा समाज की सेवा के लिए उन्हें आर्थिक सहायता भी दिया करती थी।

महात्मा गांधी के पहले अगर किसी नेता की चारों ओर ख्याति थी, तो वह थे गोपाल कृष्ण गोखले। देश में एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक उनका नाम फैला हुआ था। छोटे-से-छोटे मनुष्य से लेकर बड़े-बड़े विद्वान तक उनका आदर करते थे, गोखले उनके विचारों की प्रशंसा करते थे।

गोखले महाराष्ट्रीय चित पावन ब्राह्मण थे। रानाडे, परांजपे और तिलक आदि उनके सहकर्मियों में थे। स्वयं गांधीजी भी उनका बड़ा आदर करते थे और उनकी सेवाओं की भूरि-भूरि प्रशंसा किया करते थे।

गोखले सरोजनी नायडू से उम्र में केवल 13 वर्ष बड़े थे, पर वे उन्हें अपना गुरु और अपना सलाहकार मानती थीं। उनके हृदय में गोखले के लिए जो श्रद्धा थी, उसका वर्णन शब्दों में नहीं

किया जा सकता।

1915 ई० की 19 फरवरी को, 49 वर्ष की अवस्था में जब गोखले का स्वर्गवास हो गया, तो सरोजनी ने आंखों में आंसू लिये हुए बड़े दुःख के साथ कहा था—आज देश का वह वीर पुरुष धरती से उठ कर चला गया, जिससे मातृभूमि बड़ी-बड़ी आशाएं लगाये हुए बैठी थी। यदि गोखले की मृत्यु से मातृभूमि का हृदय फट गया हो तो आश्चर्य नहीं।

सरोजनी 1902 ई० में गोखले के सम्पर्क में आई थीं। उन्होंने ही उन्हें देश की सेवा करने का महामन्त्र दिया था। वे उनकी प्रेरणाओं से ही राजनीति के मैदान में उतरी थीं और उन्हें अपना गुरु मानती थीं। यद्यपि वे केवल 13 वर्षों तक ही उनके सम्पर्क में रही थीं, पर इस अल्पावधि में ही उनके हृदय पर, उनके गुणों का जो प्रभाव पड़ा था। वह आजीवन ज्यों-का-त्यों बना रहा।

सरोजनी हर एक काम में गोखले से सलाह लिया करती थीं। वे उनकी सलाह के बिना एक भी नया कदम आगे नहीं उठाती थीं। 1912 ई० की बात है, लखनऊ में मुसलिम लीग का अधिवेशन हो रहा था। सरोजनी को उस अधिवेशन में भाषण देने के लिए बुलाया गया था। उन्होंने अपने भाषण में साम्प्रदायिक एकता की बात कही, पर उनके मन में हलचल पैदा हो गई। क्योंकि उन्होंने यह बात गोखले से सलाह किये बिना कही थी।

सरोजनी शीघ्र ही लखनऊ से पूना जा पहुंचीं। वे पूना में परांजपे के साथ, पैदल सर्वेन्ट्स आफ इण्डिया सोसायटी के दफ्तर में गईं, जहां गोखले अपने काम में व्यस्त थे। वे उन दिनों मधुमेह की बीमारी से पीड़ित थे, पर फिर भी बड़ी तन्मयता के साथ कागज-पत्र देख रहे थे। उन्होंने सरोजनी को देखते हुए कहा—क्या तुम मुझे यह बताने आई हो कि, तुमने मुसलिम लीग के

अधिवेशन में क्या कहा था ?

सरोजनी कुछ उत्तर न देकर मौन रहीं। गोखले सरोजनी की ओर देखते हुए पुनः बोल उठे—तुमने जो कुछ कहा, बहुत ठीक कहा। मैं उसके लिए तुम्हारी प्रशंसा करता हूं।

बस, उसी दिन से सरोजनी और गोखले—दोनों साम्प्रदायिक एकता के समर्थक बन गये।

जिस प्रकार सरोजनी गोखले की प्रशंसा करती थीं, उसी प्रकार गोखले भी सरोजनी की प्रशंसा किया करते थे, उन्हें अपने हृदय का निष्कपट स्नेह प्रदान किया करते थे। 1906 ईस्वी की बात है, सरोजनी ने कलकत्ता में स्त्री शिक्षा के ऊपर एक भाषण दिया। गोखले ने उनके उस भाषण को जब अखबारों में पढ़ा तो उसकी प्रशंसा करते हुए कहा—सरोजनी के भाषण से जो बौद्धिक आनन्द प्राप्त होता है, उसका वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता।

गोखले और सरोजनी में बड़ी प्रगाढ़ मित्रता थी। सरोजनी उन्हें एक महान व्यक्ति मानती थीं। वे उनका कितना आदर करती थीं, और उनके प्रति अपने मन में कितने ऊंचे विचार रखती थीं—इसका कुछ अनुमान उनकी नीचे की पंक्तियों से लगाया जा सकता है—'गोखले जी एक ऐसे व्यक्ति थे जिनको महात्मा गांधी गंगा नदी से तुलना करते थे। पवित्र नदी में कोई भी प्रफुल्लतावर्द्धक स्नान कर सकता था। उसमें नाव और पतवार लेकर जाना एक आनन्द था।'

गोखले 1890 ई० से ही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्य थे। उन दिनों कांग्रेस नरम दल के लोगों के हाथों में थी। यद्यपि गोखले नरम विचार के थे, पर वे अत्याचार का विरोध बड़े जोरों के साथ करते थे। अंग्रेजों ने जब बंगाल को दो भागों में बांट दिया, तो गोखले ने बड़े साहस से उसका विरोध किया था।

Acc. No. 7793

केवल विरोध ही नहीं किया था, बंगाल और बंधुआ मजदूरों के प्रश्न को लेकर आन्दोलन भी किया था। स्वयं सरोजनी ने भी उस आन्दोलन में बड़ी कर्मठता के साथ गोखले का साथ दिया था।

यद्यपि गोखले नरम विचारों के थे, पर सरोजनी उन्हें कांग्रेस का एक स्तम्भ मानती थीं। वे खुले कंठ से, बिना किसी झिझक के कहा करती थीं—कांग्रेस को स्वतन्त्रता की दिशा की ओर बढ़ाने का श्रेय गोखले को है।

यद्यपि 1902 ई० में ही सरोजनी गोखले के सम्पर्क में पहुंच गई थीं, पर उनके और गोखले के बीच में अभिन्नता तो 1907 और 1911 ई० के बीच में ही पैदा हुई। 1912 ई० में तो वह अभिन्नता और भी अधिक दृढ़ हो गई थी। कितनी दृढ़ हो गई थी—उसका कुछ अनुमान गोखले की निम्नांकित पंक्तियों से लगाया जा सकता है—'अभी तक मैंने तुम्हें हमेशा उड़ते हुए पकड़ा है, अब मैं तुम्हें तुम्हारी सच्ची आत्मा को जानने के लिए बहुत समय तक पिंजरे में बंद रखूंगा।'

एक बार सरोजनी ने जब अपनी कविताओं का दूसरा संग्रह गोपाल कृष्ण गोखले के हाथों में दिया, तो वे उसे देखकर हर्षानन्द में डूब गये। उन्होंने सरोजनी की ओर देखते हुए कहा—क्या ज्वाला अभी भी तेजी से जल रही है?

सरोजनी ने उत्तर दिया—हमेशा से अधिक तेज।

इस पर गोखले ने पुनः कहा—मुझे अचरज है कि इतने लंबे समय का तूफान कैसे अतिशय प्रशंसा और सफलता को झेलेगा।

एक बार गोखले सरोजनी के साथ अपनी छत पर बैठ कर बातचीत कर रहे थे, उन्होंने बातचीत करते हुए कहा—तारों और पहाड़ों की गवाही में यहां मेरे साथ खड़ी रहो और उनके सामने अपना जीवन और अपनी प्रतिभा, अपना गीत और

अपनी वाणी, अपना विचार और अपना स्वप्न मातृभूमि के लिए अर्पित कर दो। हे कवि, पहाड़ की चोटियों से दृष्टिपात करो और घाटियों के श्रमिकों में आशा का संदेश फैलाओ !

1912 ई० गोखले लंदन में थे। उन दिनों सरोजनी भी लंदन में थीं। गोखले लंदन में बूज खेलते थे, स्त्रियों की सभाओं में भी जाते थे। वे सच्चे भारतीय थे, पर पश्चिम की हवा ने उन्हें छू लिया था। सरोजनी लंदन में भी विशुद्ध भारतीय थीं। वेश-भूषा से—खान-पान और विचारों से भी। गोखले लंदन में सरोजनी से बराबर मिला करते थे। एक बार जब वे सरोजनी से मिलने के लिए गये, तो उन्होंने सरोजनी की ओर देखते हुए कहा—तुम मुझे अपने दिमाग का एक कोना दे दो जिसे मैं अपना कह सकूं।

उन दिनों लंदन में गोखले प्रायः बीमार रहा करते थे। वे सरोजनी के साथ प्रतिदिन घूमने के लिए जाया करते थे। वे सरोजनी से तरह-तरह की बातें किया करते थे। सरोजनी उनकी उन बातों के सम्बन्ध में लिखती हैं—मैं उनकी बातों को जोड़-जोड़कर, बड़े प्यार से संजोकर रखा करती थी।

गोखले अपनी बीमारी की दशा में सरोजनी की उपस्थिति को अपने लिए संजीवनी समझते थे। वे कहा करते थे—सरोजनी तुम मेरी सभी औषधियों में सर्वश्रेष्ठ औषधि हो।

गोखले को अपने जीवन के अन्त का आभास पहले ही मिल चुका था। उन्होंने 1914 ई० में सरोजनी से अन्तिम विदाई लेते हुए कहा—मैं नहीं सोचता कि हम फिर मिलेंगे। यदि तुम जिंदा रहती हो याद रखो कि तुम्हारा जीवन देश की सेवा के लिए समर्पित है। मेरा काम पूरा हो गया।

सचमुच इसके बाद सरोजनी और गोखले का कभी मिलन नहीं हुआ। गोखले धरती को छोड़कर स्वर्ग चले गये। सरोजनी

के हृदय में रह गई उनकी याद, पवित्र याद। जिस प्रकार वसंत के चले जाने पर आम की डाल पर चहकने वाली कोयल उदास हो जाती है और उसकी यादं में सदा उदास रहती है, उसी प्रकार सरोजनी अपने महान गुरु और मित्र की याद में आजीवन उदास रहीं। वे उनकी पवित्र याद में उनके बताये हुए मार्ग पर चुपचाप चलती रहीं, सदा चलती रहीं।

महात्मा गांधी के सम्पर्क में

महात्मा गांधी और सरोजनी का मिलन एक विस्मय की ही बात है। केवल विस्मय की ही बात नहीं, होनहार की भी बात है। दैव ही ने अपनी इच्छा से विपरीत दिशाओं की ओर बहने वाली दो धाराओं को एक में मिला दिया था। यों भी कह सकते हैं कि एक उदासीन संन्यासी के पिंजड़े में एक चहकती हुई बुल-बुल को बंद कर दिया था। दैव की यह इच्छा बड़ी पवित्र थी, बड़ी मंगलमयी थी। उससे देश और समाज का कितना उपकार हुआ—यह बात सब पर विदित है।

महात्मा गांधी सत्य और अहिंसा के पुजारी थे। वे सादा खाना खाते थे और सादे वेश में रहते थे। उन्हें नाच-गाना और तड़क-भड़क बिल्कुल पसन्द नहीं थी। वे आमोद-प्रमोद से दूर, एकान्त जीवन को सर्वप्रिय जीवन मानते थे। उधर सरोजनी थीं आमोद-प्रमोद को पसन्द करने वाली नये युग की महिला। उन्हें अमीरी का जीवन प्रिय था और प्रिय था तड़क-भड़क। वे उजड़ी हुई वाटिका को पसन्द नहीं करती थीं, वे पसन्द करती थीं उस

चमन को, जिसे बुलबुल अपने गीतों से गुंजाती रहती हो। वे शाकाहारी भी नहीं थीं। यह सब होने पर भी वे अपने हृदय में ऊंचे और कोमल विचार रखती थीं। वे शाकाहारी नहीं थीं, पर दूसरों का दुःख देखकर द्रवित हो जाया करती थीं।

गांधी जी अपने को रंगों की दुनिया से अलग रखते थे। वे सफेद कपड़े पहनते थे। वे तन और मन—दोनों से उजले थे। उनके विचार बहुत धवल थे। उन्हें कृत्रिमता और मिलावट से दूर सात्विक जीवन प्रिय था। उधर सरोजनी रंगों की दुनिया की चहकने वाली बुलबुल थीं। उनके पास जो कुछ था, रंगीन था, बिल्कुल रंगीन। पर यह होने पर भी उनके पास एक ऐसा दिल था जो दूसरों के उदास चेहरे को देखकर उदास हो जाया करता था। वे चमन की एक ऐसी बुलबुल थीं जो दूसरी उजड़ी हुई वाटिकाओं को देखकर गीत गाना बन्द कर देती हैं।

गांधी और सरोजनी में जहां यह विरोधाभास था, वहां एक साम्य भी था। वह साम्य था, दोनों की हंसी। गांधी जी विपत्ति की झाड़ियों में भी हंसते थे, कांटों के बीच में भी हंसी और मजाक करते थे। वे अपनी हंसी और अपने विनोदों से कांटों को भी फूल बनाया करते थे। इसी प्रकार सरोजनी को भी हंसना प्रिय था। बड़े जोर से ठठाकर हंसना प्रिय था। वे अपनी जोर की मधुर हंसी से उदासीनता के रेगिस्तान में भी सरसता की धारा बहा देती थीं।

हो सकता है, गांधी जी और सरोजनी—दोनों का हंसने का गुण ही, दोनों को एक-दूसरे के पास खींच ले गया हो, क्योंकि दोनों ही हंसी को जीवन के लिए परमावश्यक मानते थे।

सरोजनी नायडू गांधी जी से 10 साल छोटी थीं। उनकी पहली मुलाकात गांधी जी से लंदन में उस समय हुई थी जब वे अपनी अवस्था की 30वीं सीढ़ी को पार कर रही थीं। 1914 ई०

की बात है। दूसरा महासमर शुरू हो रहा था। गांधी जी दक्षिण अफ्रीका में थे। वे दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के अधिकारों के लिए प्रयत्न कर रहे थे। उन दिनों गोखले और सरोजनी दोनों लंदन में थे।

दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के अधिकारों के लिए लड़ने के कारण गांधी जी की प्रसिद्धि चारों ओर हो चुकी थी। वे अपनी सेवाओं और त्याग के कारण महात्मा कहे जाने लगे थे। गोखले ने उन्हें लंदन में बुलाया था। उन्होंने लंदन में अंग्रेजी सरकार को देने के लिए एक स्मृति-पत्र तैयार किया था। उस स्मृति-पत्र पर जहां और लोगों के हस्ताक्षर थे, वहां एक हस्ताक्षर सरोजनी नायडू का भी था। वही अवसर था, जब गांधी जी और सरोजनी नायडू की पहली भेंट हुई थी। सरोजनी नायडू ने इस सम्बन्ध में स्वयं लिखा है—1914 ई० में गोखले के बुलाने पर गांधी जी लंदन गये थे। वे उस समय महात्मा के नाम से पुकारे जाने लगे थे। मैंने वहीं उनके प्रथम बार दर्शन किये थे। उनकी यह बात मुझे बहुत अच्छी लगी थी कि हम लोगों को गुलामों की-सी बात नहीं सोचनी चाहिए।

गांधीजी ने दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों की सेवा के लिए लंदन में एक स्वयंसेवी दल संगठित किया था। सरोजनी भी उस दल की सदस्या थीं। उन्होंने अपने प्रयत्नों से और भी कई स्त्रियों को उस दल की सदस्या बनाया था। वे उन सभी स्त्रियों के साथ उन स्वयंसेवकों के लिए कपड़े सिला करती थीं, जो दक्षिण अफ्रीका में रह कर भारतीयों की सेवा करते थे। उन्होंने स्वयं गांधीजी की भेंट का वर्णन इस प्रकार किया है—

"अचरज की बात है कि महात्मा गांधी से मेरी पहली मुलाकात 1914 का यूरोपीय महायुद्ध शुरू होने के ठीक पहले लंदन में हुई। जहां उन्होंने अपने सत्याग्रह के सिद्धान्त का श्रीगणेश

किया था और अपने देशवासियों के लिए, जोकि उस समय मुख्य रूप से ऋणी-बंधुआ मजदूर थे, विजय प्राप्त की थी। उस दक्षिण अफ्रीका से उद्धत जनरल स्मट्स को जीतते हुए जब वे आये ही थे तब मैं उनका जहाज आने पर मुलाकात नहीं कर सकी थी, किन्तु दूसरे दिन दोपहर बाद केनसिंगटन के एक अनजान हिस्से में उनका निवास खोजती हुई मैं भटकी थी और एक पुराने ढंग के मकान की सीधी सीढ़ियों पर चढ़ी थी जहां पाया था खुले दरवाजे में दिखाई देने वाला एक छोटे आदमी का सजीव चित्र जिसका सिर छिपा हुआ था, फर्श पर एक काले जेल के कम्बल पर बैठा हुआ, और जेल के लड़की के कटोरे में से मीड़े हुए टमाटर व जैतून के तेल का मलिन भोजन कर रहा था। चारों ओर रखे थे भुनी हुई मूंगफली और सूखे आटे के बेस्वाद बिस्कुटों के पिचके हुए कुछ डिब्बे। मैं अपने आप जोर-जोर से हंस पड़ी—उस प्रसिद्ध नेता के इस आशा के विपरीत मजेदार दर्शन को पाकर जिनका नाम हमारे देश में घर-घर में लिया जाने लगा था। उन्होंने आंखें ऊपर उठाईं और मुझे देखकर हंस पड़े यह कहते हुए, 'अरे, तुम अवश्य ही श्रीमती नायडू हो! और दूसरा कौन इतना आदर विहीन हो सकता है? आओ और मेरे साथ खाना खाओ!' 'नहीं धन्यवाद', मैंने सूंघते हुए कहा, 'यह कितना गन्दा खाना है।'"

ऊपर के उद्धरण से स्पष्ट है कि जब सरोजनी पहले-पहल गांधीजी से मिलीं, तो उन्हें देखकर उनके मन में श्रद्धा तो नहीं उत्पन्न हुई, पर विस्मय अवश्य उत्पन्न हुआ। गांधीजी के रहन-सहन और उनके भोजन को देखकर उन्होंने बड़े आश्चर्य के साथ सोचा कि यह कैसा व्यक्ति है, जिसे लंदन की तड़क-भड़क भी अपनी ओर नहीं खींच रही है। सरोजनी के मन का यह आश्चर्य धीरे-धीरे श्रद्धा के रूप में बदल गया और इतना बदल गया कि

वे गांधीजी के संकेत पर अपना सब कुछ छोड़ने के लिए तैयार हो जाती थीं। उन्होंने स्वयं एक जगह लिखा है—गांधीजी को दरिद्र नारायण की सेवा प्रिय थी। मुझे दरिद्र बनने में बड़ा आनन्द मालूम होता था, क्योंकि दरिद्र ही गांधीजी को अधिक प्रिय थे।

गांधीजी लंदन से विदा हो रहे थे। उन्हें विदाई देने के लिए उनके घर में बहुत से आदमी एकत्र हुए थे। उस भीड़ की श्रद्धा का वर्णन सरोजनी नायडू ने इस प्रकार किया है—मैं रोमांचित हो उठी थी कि पूर्वी और पश्चिमी सभी देशों के लोग उनके घर इकट्ठे हुए थे ··यह इस बात का प्रमाण था कि सच्ची महानता को सर्वदेशीय प्रशंसा होती है।"

1914 ई० के बाद सरोजनी भारत लौट आईं, पर गांधी जी लंदन में ही रुक गये थे, क्योंकि उन दिनों वे अस्वस्थ थे। वे जब 1915 ई० में भारत लौटे तो उस समय भी वे बीमार थे। गोखले ने उन्हें सलाह दी कि वे तब तक कोई कार्य आरम्भ न करें जब तक कि भली प्रकार स्वस्थ न हो जाएं।

अतः गांधीजी भारत लौटकर एक वर्ष तक आराम करते रहे। इस बीच सरोजनी नायडू ने उनके कार्यभार को भली प्रकार संभाल लिया था, क्योंकि, अब तक वे उन्हें भली प्रकार समझ चुकी थीं और उनके मन में उनके लिए अगाध श्रद्धा भी पैदा हो चुकी थी। वे जब भारत लौटकर आईं, तो स्थान-स्थान के दौरे करने लगीं, और जनता को गांधीजी के संदेश सुनाने लगीं। यही कारण था कि जब तक गांधीजी ने दौरे प्रारम्भ नहीं किये थे, लोग गांधीजी को तो कम, पर सरोजनी नायडू को अधिक जानते थे।

सरोजनी नायडू ने दक्षिण अफ्रीका में महात्मा गांधीजी का जो जीवन देखा था, उससे उनके मन में उनके लिए निष्ठा जाग उठी थी। उन्होंने अपनी उस निष्ठा को एक कविता में भी

चित्रित किया था। उस कविता में उन्होंने गांधीजी को एक संत कहा था। वह कविता उन्होंने गांधीजी के पास भेजी थी। गांधी जी 1916 ई० में राजनीति के मैदान में उतरे। वे राजनीति के मैदान में उतर कर भारत की स्वतंत्रता के लिए काम करने लगे। उसके बाद ही चम्पारन में किसान सत्याग्रह आरम्भ हुआ। उस सत्याग्रह में गांधी जी को अभूतपूर्व विजय प्राप्त हुई, फलतः गांधीजी का नाम चारों ओर फैल गया। वे किसानों और गरीबों के नेता माने जाने लगे।

चम्पारन सत्याग्रह के बाद गांधीजी हिन्दू-मुस्लिम एकता, अछूतों का उद्धार और किसानों की गरीबी को लेकर देश में चारों ओर घूमने लगे। सरोजनी नायडू ने भी इन सभी कामों में बड़े उत्साह से उनका हाथ बंटाया, फलतः वे गांधीजी के निकट आ गईं और गांधीजी उनके भीतर छिपी हुई शक्ति को जानकर उनका आदर करने लगे। 1918 ई० में बम्बई में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। उस अधिवेशन में सरोजिनी नायडू ने भी भाग लिया था। उन्होंने अधिवेशन में अपनी 'जागो' शीर्षक कविता सुनाकर, सबके मन को अपनी ओर खींच लिया था।

1919 ई० में अंग्रेजी सरकार ने रौलट-एक्ट पास किया। गांधीजी ने देश में चारों ओर घूम-घूमकर उस एक्ट का विरोध किया। सरोजनी नायडू ने भी कई सभाओं में भाषण देकर उस एक्ट का विरोध किया था।

1919 ई० के अन्त में गांधीजी ने साबरमती आश्रम में एक सम्मेलन आयोजित किया, जिसमें चोटी के नेताओं को बुलाया गया था। गांधीजी ने उस सम्मेलन में भाग लेने के लिए सरोजनी नायडू को भी आमंत्रित किया था।

साबरमती के सम्मेलन में आगे के कार्यक्रम की एक रूपरेखा तैयार की गई थी। सत्याग्रह के लिए एक प्रारूप भी बनाया

गया था। निश्चित किया गया था कि अप्रैल के महीने सारे देश में रौलट एक्ट के विरोध में हड़ताल होगी।

साबरमती के उस सम्मेलन में 12 नेता सम्मिलित थे। सर्व-प्रथम उन नेताओं ने ही सत्याग्रह के फार्म पर हस्ताक्षर किये थे। हस्ताक्षर करने वालों में सरोजनी नायडू भी थीं।

साबरमती सम्मेलन के बाद 1919 ई० के मार्च महीने में सरोजनी नायडू ने मद्रास में एक विशाल जनसभा को सम्बोधित किया। उन्होंने अपने भाषण में कहा था—क्योंकि सत्याग्रह आंदोलन सांयोगिक जीवन का एक सिद्धान्त है जिसे अवश्य ही बढ़ना और फैलना चाहिए, क्योंकि इसके अन्दर जीवन की अमर क्रियाएं सन्निहित हैं, और इसलिए सत्याग्रह आंदोलन उस मंदिर या आश्रम में अपनी ज्वाला प्रज्वलित की है जहां महात्मा गांधी प्रधान पुरोहित या गुरु हैं। 'सच बोलना अच्छा है किन्तु सच जीना और अधिक अच्छा है।'

अप्रैल की हड़ताल के पहले सरोजनी नायडू ने सारे देश का दौरा किया। उन्होंने बड़ी-बड़ी सभाओं में भाषण देकर रौलट एक्ट का विरोध किया और सत्याग्रह के लिए जनता का आह्वान किया। उनके सुन्दर व्यक्तित्व और उनकी ओजस्विनी वाणी ने जनता के प्राणों में जादू-सा जगा दिया। देश में एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक जागृति का सागर लहराने लगा, गांधीजी की जय का स्वर गूंजने लगा।

1919 ई० की 6 अप्रैल को सारे देश में हड़ताल हुई। हड़ताल के दिन गांधीजी और सरोजनी नायडू दोनों नेता बम्बई में थे। इन दोनों ही सर्वप्रिय नेताओं ने उस दिन बम्बई की दो मस्जिदों में भाषण दिये। दोनों ही नेताओं ने अपने भाषणों में हिन्दू-मुस्लिम एकता पर जोर दिया था।

दूसरे दिन गांधीजी अमृतसर के लिए रवाना हुए, पर वे

बीच ही में गिरफ्तार कर लिये गये। गांधीजी की गिरफ्तारी से सारे देश में क्षोभ और उत्तेजना की लहर दौड़ पड़ी। देश में एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक अंग्रेजी सरकार मुर्दाबाद का नारा सुनाई पड़ने लगा।

इसके बाद ही अमृतसर के जलियांवाला बाग का हत्याकांड हुआ। बहुत-से स्त्री-पुरुष और बच्चे बड़ी बेरहमी के साथ मार डाले गये। उस हत्याकांड ने आग में घी का-सा काम किया। देश में चारों ओर जोश की लहर दौड़ पड़ी। अनेक लोगों ने अपनी-अपनी सरकारी उपाधियां त्याग दीं। उपाधियां छोड़ने वालों में रवीन्द्रनाथ टैगोर भी थे।

जलियांवाला हत्याकांड के बाद ही गांधीजी ने असहयोग आंदोलन आरम्भ किया। चारों ओर सत्याग्रह होने लगा। गांधीजी की जय के नारों से आकाश गूंज उठा। स्वयंसेवकों और नेताओं की गिरफ्तारियां भी होने लगीं। हिन्दू और मुसलमान—दोनों एक ही हथकड़ी में अपने हाथ बंधाने लगे। अपूर्व दृश्य था एकता की, अपूर्व समां थी उत्तेजना की।

पर बीच में ही सत्याग्रह की धारा रुक गई। कारण था, हिंसा। गोरखपुर के चौरीचौरा में एक थाना जला दिया गया, थाने के कई आदमी जान से मार डाले गये। इन्हीं दिनों प्रिन्स ऑफ वेल्स के आगमन पर भी हिंसा भड़क उठी। बहुत-से आदमियों की जानें गईं। चारों ओर खून की नदियां-सी बहने लगीं।

गांधीजी को इस हिंसा से बड़ा दुःख हुआ। उन्होंने सत्याग्रह को बन्द करते हुए कहा—मेरी नाक में स्वराज्य की बदबू आ रही है।

देश में चारों ओर भड़की हुई हिंसा की आग को दबाने में सरोजनी नायडू ने बड़ा प्रशंसनीय कार्य किया था। वे बार-बार दौरे पर जाती थीं और लौटकर फिर महात्मा गांधी के पास

पहुंचती थीं। उन्हें वास्तविक स्थिति से अवगत कराती थीं।

उन दिनों सरोजनी नायडू का साहस देखने योग्य था। वे बड़ी निर्भीकता के साथ दंगाइयों के बीच में घुस जाती थीं और पीड़ितों की सहायता करती थीं। वे घायलों को अस्पतालों में भिजवाती थीं, उनकी चिकित्सा की समुचित व्यवस्था करती थीं।

सरोजनी नायडू जब महात्मा गांधी को सारी बातें बताने लगतीं तो वे मुस्करा दिया करते थे। अपनी मुस्कराहट के द्वारा वे सरोजनी के कार्यों पर अपनी प्रसन्नता ही प्रगट करते थे।

टूटा पंख

1917 ई० में सरोजनी की कविताओं का एक नया संग्रह प्रकाशित हुआ। जिसका नाम था टूटा पंख। इस संग्रह के पश्चात ही सरोजनी की कविता-वल्लरी मुरझा-सी गई। इसका यह मतलव नहीं है कि उनकी कविता करने की शक्ति में कमी आ गई थी। इसका मतलव तो यह है कि उनकी रुचि कविता की ओर से हटने लगी थी। वे अब भी कविताएं लिखती थीं, पर अब बहुत कम लिखती थीं।

सरोजनी नायडू की रुचि कविता की ओर से कम क्यों हुई इसके दो कारण हैं। एक कारण तो यह था कि सरोजनी जिस ढंग की कविता करती थीं, अब उस ढंग का युग समाप्त हो गया था और दूसरा कारण यह था कि वे अब राजनीति में भाग लेने लगी थीं। इन दोनों ही कारणों ने एक साथ मिलकर सरोजनी की काव्य-धारा की गति में मन्दता पैदा कर दी। धीरे-धीरे वह

मन्दता इतनी बढ़ गई कि उनकी काव्यधारा सूख-सी गई। वे कविता को बिल्कुल भूल-सी गयीं। उनके जीवन में आ गई राजनीति, बिल्कुल राजनीति।

'टूटा पंख' के प्रकाशन के पहले ही सरोजनी नायडू ने यह सोच लिया था कि अब वे कदाचित कविता नहीं लिख सकेंगी। इसीलिए उन्होंने अपनी कविताओं के संग्रह का नाम 'टूटा पंख' रखा था। यद्यपि उन्होंने अपनी ओर से कुछ नहीं कहा, पर टूटा पंख को देखकर समझने वालों ने यही समझा कि सरोजनी की कविताओं के पंख अब टूट गये हैं। स्वयं गोपाल कृष्ण गोखले ने टूटा पंख को देखकर आश्चर्य प्रगट करते हुए कहा था—'तुम तो एक चहकने वाली बुलबुल हो, फिर यह टूटा पंख क्यों ?'

सरोजनी ने गोखले के पंख का जो उत्तर दिया था, वह साफ नहीं था। उनके उस अस्पष्ट उत्तर से यह साफ-साफ ध्वनित होता था कि अब उनकी कविताओं के पंख टूट गये हैं, सचमुच टूट गये हैं। यहां हम टूटा पंख की कुछ कविताओं को नीचे दे रहे हैं। उन्हें पढ़कर सहज में ही यह अनुमान लगाया जा सकता है कि अब उनकी कविताओं में पहले की अपेक्षा शिथिलता आ गई थी।

(1)

'तुम्हारे ही स्वच्छन्द हृदय का कोलाहल करेगा आक्रांत तुम्हें
अभिलाषा के सु-बली निद्रविहीन पंखों से,
तीखी भूख तुम्हारी नाड़ियों को ही काटेगी तुम्हें
अग्नि के दुर्दान्त तेज दन्तों से।
जब यौवन और वसन्त-कामना धोखा दे देंगे तुम्हें
और मजाक उड़ायेंगे तुम्हारे गर्वीले विद्रोह का हार से।
भगवान जाने, हे प्रिय, मैं तब बचाऊं या मारूं तुम्हें,
जब गिर पड़ी मेरे पैरों में, चुके-चुके टूटे-से।

(2)

मत लौटाओ मुझे मेरा बीता हुआ उल्लास,
निषिद्ध आशा और प्राप्त सपना···
नष्ट उद्देश्य और टूटा अभिमान···
स्वीकृत करो एक घंटे की स्वल्प दया में
दान आंसुओं का, बचाने मेरी दुखी आत्मा को।
लेना चाहो तो ले लो मेरा मांस खिलाने अपने कुत्तों को,
चाहो तो ले लो मेरा खून सींचने अपनी बगिया के पौधों को;
कर दो मेरे दिल को राख और सपनों को धूल—
क्या मैं तुम्हारी नहीं हूं, प्रिय, चाहने या मारने के लिए ?
गला घोंट दो मेरी आत्मा का औ' झोंक दो उसे आग में !
मेरा सच्चा प्रेम क्यों लड़खड़ाये या डरे या करे विद्रोह,
प्रिय, मैं तुम्हारी हूं फूल-सी रहने के लिए तुम्हारे हृदय में
या जलने तुम्हारे लिए तुम्हारी ही ज्वाला में कोई समान।

(3)

सारी आवाजें—हे भयंकर औ' कोमल औ' दिव्य
हे समग्र बलि की रहस्यमयी मां,
हम सजा रहे तुम्हारे मंदिर की गहन वेदियां,
कुंकुम-अक्षत और पवित्र पत्रों से,
लाते हम तेरे लिए सारी भेंट जीवन-मरण की;
उमा ! हैमवती !
कुमारियां—हम ला रहीं तेरे लिए वन से बेर ओ' कलियां।
वधुएं—हम ला रहीं उल्लास वधू की प्रार्थना का।
माताएं—हम ला रहीं मातृत्व की सुमधुर पीड़।
विधवाएं—और हम निराशा के कटु जागरण।
सारी आवाजें—लाते हम तेरे लिए सारे आनन्द औ' सारे दुःख;
अम्बिका ! पार्वती !

कारीगर—हम ला रहे धरती की निम्न श्रद्धांजलि।
किसान—हम ला रहे अपने मेमने और गेहूं की बालें।
विजेता—और हम अपनी तलवारें व प्रतीक परिश्रम के।
विनित—और हम हार की लज्जा व व्यथा।
सारी आवाजें—लाते हम तेरे लिए सम्पूर्ण विजय
औ' सारे आंसू;
गिरजा ! शाम्भवी !
विद्वान—हम ला रहे प्राच्य कलाओं के रहस्य।
पुरोहित—हम ला रहे पुरातन विश्वासों के खजाने।
कवि—और हम हृदय का सूक्ष्म संगीत।
देशभक्त—और हम निज कर्मों की निद्राहीन पूजा।
सारी आवाजें—लाते हम तेरे लिए समस्त यश औ' सारी महिमा;
काली ! माहेश्वरी !

टूटा पंख में इसी प्रकार की विविध विषयों पर कविताएं हैं। यद्यपि इन कविताओं में कल्पना का ह्रास नहीं हुआ है, पर इनमें वह उल्लास नहीं है, जो सरोजनी की पहली कविताओं में था।

स्वतन्त्रता के आन्दोलन में

सरोजनी नायडू ने 1916 ई० में राजनीति के मैदान में सक्रिय रूप से अपना कदम रखा था। इसी वर्ष लखनऊ में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ था। उन्होंने बड़े उत्साह से उस अधिवेशन में भाग लिया था और उसमें भाषण भी किया था। उसी अधिवेशन में उनकी स्वर्गीय श्री नेहरू से सर्वप्रथम भेंट हुई थी। स्वर्गीय श्री नेहरू ने उनके भाषण पर अपना मत प्रगट करते हुए लिखा है—मैं सरोजनी के भाषण को सुनकर बड़ा प्रभावित हुआ था।

1917 ई० के नवम्बर महीने में जब भारत के वर्तमान प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी का जन्म हुआ, तो सरोजनी नायडू ने स्वर्गीय श्री नेहरू को बधाई संदेश देते हुए लिखा था—आपकी यह पुत्री भारत के मुख को उज्ज्वल करेगी और भारत में ही नहीं, विश्व में महान बनेगी।

1919 ई० में सरोजनी नायडू इंगलैंड गयीं। वे उस समय पूर्ण रूप से राजनीति में प्रवेश कर चुकी थीं। वे 1920 ई० में जब भारत लौटकर आयीं तो भारत के वायुमंडल में गर्म हवा चलने लगी थी। गांधीजी ने असहयोग की लड़ाई की घोषणा कर दी थी। असहयोग भारतीय स्वतन्त्रता का पहला युद्ध था, जो गांधीजी के द्वारा लड़ा गया था।

सरोजनी नायडू ने भी बड़े उत्साह के साथ असहयोग की लड़ाई में भाग लिया। उन दिनों चारों ओर हड़तालों और जुलूसों की धूम रहती थी। सरोजनी नायडू ने कई जुलूसों का संचालन किया और कई सभाओं में भाषण दिये। उन्होंने बड़े जोशीले शब्दों में हड़तालों और पिकेटिंगों के लिए जनता का आह्वान किया। वे भारत की कोकिला कहलाने लगीं और उनका नाम एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक फैल गया।

1922 ई० में गांधीजी पर मुकदमा चलाया गया। श्रीमती नायडू प्रतिदिन अदालत में जाती थीं और जब तक मुकदमा चलता रहता था, अदालत में बैठी रहती थीं। उन्होंने बाम्बे क्रानिकल में गांधीजी के मुकदमे का वर्णन इस प्रकार किया था—"कानून की नजरों में एक बन्दी और गुनाहगार; फिर भी एक स्वयंस्फूर्त श्रद्धा के रूप में सारी कचहरी उठकर खड़ी हो गई, जब मोटी और छोटी धोती पहने हुए एक दुबली-पतली, गंभीर, दुर्दमनीय आकृति महात्मा गांधी ने प्रवेश किया, साथ में थे उनके पट्ट शिष्य और सहबन्दी शंकरलाल बैंकर···'तो तुम मेरे पास बैठे हो जिससे

मुझे सहारा दे सको यदि मैं टूट जाऊं तो' उन्होंने मजाक किया, अपनी गहराई में विश्वजनीन शैशव की अमलिन दीप्ति को छिपाते हुए हास्य के साथ; और चारों ओर आये हुए सभी लोगों को देखते हुए वे बोले, 'यह एक पारिवारिक सम्मेलन है, न कि न्यायालय।' जब न्यायाधीश ने अपना आसन ग्रहण किया तब भीड़, भय, अभिमान और आशा से रोमांचित हो गई···एक प्रशंसनीय न्यायाधीश, अपनी निर्भय और दृढ़ कर्तव्यनिष्ठा के लिए हमारी प्रशंसा का पात्र, उसकी निष्कलंक विनम्रता, एक अद्वितीय अवसर के प्रति उसकी उचित अवधारणा और एक अद्वितीय व्यक्ति के लिए उसकी सुश्रद्धा···विचित्र मुकदमा शुरू हुआ और जैसे ही मैंने अपने प्रिय स्वामी के होंठों से सन्तोचित उत्साह से दीप्त अमर शब्दों को निकलते हुए सुना वैसे ही मेरे विचार दौड़कर पहुंचे शताब्दियों पूर्व एक भिन्न देश और एक भिन्न युग में, जब एक इसी प्रकार का नाटक रचा गया था और मिलते-जुलते साहस से एक मिलता-जुलता संदेश प्रसारित करने के लिए एक दिव्य और सौम्य शिक्षक को शूली पर चढ़ा दिया गया था। अब मैंने समझा कि निम्न-वंशीय, नाद में झुलाये गए नजारथ के ईसा से ही भारतीय स्वतन्त्रता के इस अविजित नेता की इतिहास में तुलना की जा सकती है जो अतुलनीय करुणा से मानवता पर प्रेम करता है और उसके ही सुन्दर वाक्यांश में गरीबों को गरीबों के ही मन से समझता है।"

मुकदमे में गांधीजी को 6 वर्ष की सजा दी गई थी, पर सजा पूरी करने के पहले ही उन्हें छोड़ दिया गया था। महात्मा गांधी सरोजनी के त्याग और सेवाओं से अत्यधिक प्रभावित थे। उन्होंने बेलगांव कांग्रेस में कहा था—सरोजनी एक ऐसी स्त्री हैं, जिन्हें मेरा स्थान लेना चाहिए। फलतः 1925 ई० में कानपुर में जब कांग्रेस का अधिवेशन हुआ, तो सरोजनी अध्यक्षा चुनी गयीं।

उन्होंने अपने अध्यक्ष पद से जो भाषण दिया था, वह बड़ा ही छोटा था, किन्तु बड़ा ही सारगर्भित था। उन्होंने देशवासियों से अपील की थी कि भारत के रहने वाले हर एक छोटे-बड़े आदमी को भय छोड़कर देश की स्वतन्त्रता के लिए काम करना चाहिए।

1926 ई० में भारत में साइमन कमीशन का आगमन हुआ। कांग्रेस ने सर्वसम्मति से कमीशन के बहिष्कार का निश्चय किया, फलस्वरूप कमीशन जहां-जहां गया, उसके विरोध में बड़े-बड़े जुलूस निकाले गये। लाहौर के जुलूस में स्वर्गीय लाला लाजपतराय पर और लखनऊ के जुलूस में स्वर्गीय श्री नेहरू पर पुलिस के डण्डे पड़े थे। पुलिस के डण्डों की चोट से ही लालाजी की मृत्यु हो गई थी। सरोजनी नायडू ने भी बड़े उत्साह और जोश के साथ साइमन कमीशन के बहिष्कार सम्बन्धी कार्यों में भाग लिया था।

साइमन कमीशन के लौट जाने के बाद राजनीतिक सरगर्मियां कुछ कम हो गई थीं। अंग्रेजी सरकार से समझौते की बातचीत चल रही थी और गांधीजी को निराश होना पड़ा।

1929 ई० के अन्तिम दिनों में लाहौर में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। स्वर्गीय श्री नेहरू अध्यक्ष के पद पर थे। उनके ही प्रयत्नों से कांग्रेस में पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव पास किया गया। उसके बाद 1930 ई० के मार्च महीने में गांधीजी ने नमक सत्याग्रह की घोषणा की। यह भारतीय स्वतंत्रता का दूसरा युद्ध था, जो गांधीजी के द्वारा लड़ा गया था।

सरोजनी नायडू 1928 ई० के अन्त में ही अमेरिका चली गई थीं। वे जब अमेरिका से लौटकर आयीं, तो गांधीजी नमक सत्याग्रह की घोषणा कर चुके थे। 1930 ई० की 12 मार्च का दिन था। उन्होंने पचहत्तर आदमियों की टोली के साथ नमक

कानून तोड़ने के लिए दांडी की पैदल यात्रा की। वे लगभग ढाई सौ किलोमीटर पैदल चलकर दांडी पहुंचे।

गांधीजी ने अपने दल में किसी भी स्त्री को नहीं रखा था। अतः श्रीमती नायडू बहुत-सी स्त्रियों के साथ पहले ही दांडी जा पहुंची थीं। वे सभी स्त्रियां अपने घर समुद्र का पानी ले जाने के लिए बाल्टियां ले गई थीं। स्त्रियों की सूझ-बूझ और उनके साहस की गांधीजी ने बड़ी प्रशंसा की थी।

गांधीजी ने दांडी में अपने दल के साथ नमक कानून को तोड़ा। स्वयंसेवकों पर पुलिस के डण्डे पड़े और गांधीजी को गिरफ्तार कर लिया गया। गांधीजी की गिरफ्तारी के बाद सारे देश में उत्तेजना की लहर दौड़ पड़ी। चारों ओर नमक कानून तोड़ा जाने लगा। बड़े-बड़े नेता और लाखों कार्यकर्त्ता गिरफ्तार किये गये। श्रीमती सरोजनी नायडू को भी गिरफ्तार करके जेल पहुंचाया गया था।

सरोजनी नायडू की कहानी बड़ी मार्मिक है। गांधीजी को गिरफ्तार करके जब जेल पहुंचा दिया गया तो सरोजनी उनसे मिलने के लिए जेल में गयीं। गांधीजी उन्हें देखकर मुस्कराये और उन्होंने मुस्कराते हुए कहा—धरसाना का नमक भंडार तुम्हें बुला रहा है। तुम्हें स्वयंसेवकों के साथ धरसाना जाना होगा, नमक भंडार पर अधिकार करना होगा।

सरोजनी नायडू ने बिना किसी हिचकिचाहट के गांधीजी के सामने अपना सिर झुका दिया। वे स्वयंसेवकों की विशाल सेना के साथ धरसाना जा पहुंचीं। जब वे नमक भंडार के पास पहुंचीं, तो पुलिस के दल ने उनका रास्ता रोक दिया। सरोजनी अपने दल के साथ सड़क पर बैठ गयीं। उन्होंने स्वयंसेवकों से कहा—तुम्हारे सामने पुलिस खड़ी है। पुलिस के हाथों में डंडे हैं। अवश्य वे डण्डे तुम पर बरसेंगे। पर तुम्हें उन डण्डों का स्वागत प्यार

और नम्रता से ही करना होगा।

गर्मी के दिन थे। सूर्य आग की तरह तप रहा था। सड़क तवे की तरह जल रही थी। गर्म-गर्म हवाएं चल रही थीं पर सरोजनी अपने स्वयंसेवकों के साथ उस सड़क पर, चिलचिलाती हुई धूप में बैठी हुई थीं। प्यास से होंठ ही नहीं, कलेजा तक सूखा जा रहा था, पर फिर भी पुलिस के लोग उनके पास पानी नहीं पहुंचने देते थे।

आखिर धैर्य का अन्त हो गया। सरोजनी अपने दल के साथ उठीं और नमक भण्डार की ओर बढ़ने लगीं। सहसा एक गोरा अफसर उनके पास पहुंचा और उनके हाथ की ओर अपना हाथ बढ़ाता हुआ बोला—आप गिरफ्तार हैं।

सरोजनी ने कड़कते हुए कहा—मैं आऊंगी, किन्तु मुझे छुओ मत। सरोजनी नायडू को कंटीले तारों के घेरे में ले जाया गया। वहां से वे जेल पहुंचा दी गयीं। उनके साथ मणिलाल गांधी भी गिरफ्तार किये गये थे। जब दोनों को ले जाने के लिए जेल की गाड़ी आयी, तो सरोजनी ने मना किया। स्वर में कहा—चलो, अपनी गाड़ी बैठो।

सरोजनी नायडू को नमक कानून तोड़ने के अभियोग में जेल की सजा दी गई थी। जब वे अपनी सजा पूरी करके लौटीं, तो सभी बड़े-बड़े नेता जेल में बन्द थे। नमक आन्दोलन शिथिल पड़ गया था। इन्हीं दिनों 1931 ई० की 6 फरवरी को पंडित मोतीलाल जी का स्वर्गवास हो गया। श्रीमती सरोजनी नायडू को उनकी मृत्यु से बड़ा आघात लगा था।

1931 ई० में महात्मा गांधी और तत्कालीन वाइसराय, लार्ड इरविन में समझौते की बातचीत चली। उस बातचीत के अनुसार महात्मा गांधी गोलमेज कान्फ्रेंस में भाग लेने के लिए लंदन गये। उनके साथ सरोजनी नायडू भी लंदन गयीं। कान्फ्रेंस

खत्म होने पर गांधीजी भारत लौट आये, पर सरोजनी नायडू वहीं रह गयीं। उन्होंने कई यूरोपीय देशों का दौरा किया। उसके बाद वे केपटाउन गईं। केपटाउन में उनके साथ स्वर्गीय श्रीनिवास शास्त्री भी थे।

गांधीजी जब लंदन से लौटकर आये तो फिर आन्दोलन की आंधी चल पड़ी। गांधीजी को फिर गिरफ्तार किया गया। बहुत से नेता और स्वयंसेवक भी गिरफ्तार किये गये। सरोजनी नायडू जब केपटाउन से लौटकर आयीं, तो उन्हें भी गिरफ्तार किया गया। उन्हें उसी जेल में बन्द किया गया, जिसमें मणिबेन पटेल थीं।

मणिबेन पटेल ने लिखा है—श्रीमती नायडू जब जेल में आयीं, तो उनके साथ बहुत-सी सुविधाएं भी आई थीं।

सरोजनी नायडू जब जेल से छूटकर आयीं, तो वे रचनात्मक कार्यों में लग गयीं। उन्होंने देश और विदेश का दौरा भी किया। उन्होंने विदेशों की कई सभाओं और संस्थाओं में भाषण देकर, विदेशियों के मन में भारतीय स्वतन्त्रता के लिए सहानुभूति भी पैदा की थी।

स्वतन्त्रता आन्दोलन कई वर्षों तक रुका रहा। कभी शुरू हो जाता था, तो कभी बन्द हो जाता था, राज्यों में अलग-अलग सवाल उठते थे, और उन्हें लेकर छोटे-मोटे आन्दोलन भी हुआ करते थे। पर 7-8 वर्षों तक ऐसा कोई आन्दोलन नहीं हुआ, जिसे अखिल भारतीय आन्दोलन कहा जा सके।

कई वर्षों के बाद 1942 ई० की 8 अगस्त को 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव पास किया गया। उस प्रस्ताव के पास होने के साथ-ही-साथ गांधीजी और दूसरे सभी बड़े-बड़े नेता गिरफ्तार कर लिये गये। सरोजनी नायडू भी गिरफ्तार की गयीं और गांधी जी के साथ उन्हें भी आगा खां महल में बन्द किया गया।

आगा खां महल में ही महादेव देसाई का स्वर्गवास हुआ। गांधीजी ने 6 महीने बाद अपना ऐतिहासिक अनशन आरम्भ किया। अनशन से उनकी दशा खराब हो गई। सारे देश में उदासी छा गई, पर अंग्रेजी सरकार के झुकने के कारण गांधीजी ने अपना अनशन समाप्त कर दिया।

गांधीजी के अनशन के बाद श्रीमती नायडू मलेरिया से पीड़ित हुईं। 1943 ई० में उन्हें इलाज के लिए जेल से बाहर ले जाया गया और उसके बाद छोड़ दिया गया। 1944 ई० में जेल में ही कस्तूरबा स्वर्ग सिधार गईं। गांधीजी को भी जेल से छोड़ दिया गया।

1942 ई० में जो 'भारत छोड़ो' आन्दोलन आरम्भ किया था, वह अब ठण्डा पड़ गया था। चारों ओर एक अनोखा सन्नाटा सा छाया हुआ था। ऐसा लगता था, अब कुछ होने वाला है, अब कुछ होने वाला है।

स्वतन्त्रता के पहले

1947 ई० की 15 अगस्त को भारत पूर्ण स्वतंत्र हुआ। इसके पूर्व सरोजनी नायडू ने दो कार्य किये, संक्षिप्त रूप में उस पर भी प्रकाश डालना आवश्यक है। उनके राजनीतिक जीवन पर कुछ लिखने के पहले एक बार हम उनकी कविताओं की चर्चा कर लेना चाहेंगे। 1918 के बाद श्रीमती नायडू का काव्य प्रवाह मन्द पड़ गया था। उनकी सरस कविताएं अब लोगों को पढ़ने को नहीं मिलती थीं। पर उनकी कविताओं के प्रेमियों के मन में उनकी कविताओं की याद अवश्य बनी रहती थी। वे हृदय से चाहते थे कि श्रीमती नायडू की कविताएं उन्हें पुनः पढ़ने को मिलें।

लोगों की इच्छा और आकांक्षाओं के ही फलस्वरूप श्रीमती

नायडू की कविताओं के तीन संग्रह प्रकाशित हुए—1936 ई० में, 1943 ई० में और 1946 ई० में। पहले के दो संग्रह अमेरिका से और तीसरा भारत से प्रकाशित हुआ था। इन संग्रहों के प्रकाशित होने के कारण सरोजनी नायडू एक बार पुनः सारे संसार में कवयित्री के रूप में चमक उठीं। भारत के ही नहीं संसार के बड़े-बड़े विद्वानों ने भी उनके संग्रहों की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

स्वतन्त्रता के पूर्व सरोजनी नायडू ने अमेरिका का दौरा भी किया। अमेरिका का दौरा करते हुए उन्हें जो अनुभव प्राप्त हुए थे, उसका वर्णन उन्होंने गांधीजी के लिखे हुए एक पत्र में किया था। उस पत्र का कुछ अंश इस प्रकार है—'कभी भी, मैं आपको विश्वास दिलाऊं, मेरे वैदिक पूर्वजों की आत्माओं ने सूर्य देव के लिए गायत्री इतने आनन्दपूर्वक नहीं गायी थी, जितनी मैं अपने शरीर की शीतल दुखती उष्ण अस्थियों की मुक्ति के प्रीतिकर गृह में गाता हूं।'

1947 ई० में दिल्ली के लाल किले में एशियाई सम्बन्ध सम्मेलन आयोजित किया गया था। श्रीमती नायडू सम्मेलन की अध्यक्षा चुनी गई थीं। उन्हें उस सम्मेलन के लिए भारत का प्रतिनिधि भी बनाया गया था।

स्वर्गीय श्री नेहरू ने सम्मेलन का उद्घाटन किया था।

श्रीमती नायडू ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा था—'साथियो और एशिया के सम्बन्धियो, तुमको आश्चर्य होगा कि किसलिए आज इस महान सम्मान के स्थान पर बैठने के लिए एक मामूली स्त्री को चुना गया है। उत्तर बहुत सरल है। भारत हमेशा अपनी स्त्रियों का सम्मान करता रहा है। जब मैं एशिया के राष्ट्रों के इस विशाल समुदाय को देखती हूं तब मैं इतनी विचलित हो जाती हूं कि करीब-करीब केवल करीब-करीब मूक

क्या तुम शरण या सहायता चाहते हो, क्या तुम प्रम और सद्-भावना चाहते हो, हमारे पास आशा से आओ, हमारे पास श्रद्धा से आओ, हमारे पास इस विश्वास से आओ कि सब उपहार हमारे देने के लिए हैं। मैं सारे संसार को देती हूं इस भारत की स्वतंत्रता, जो अतीत में कभी मरा नहीं है, जो भविष्य में अनश्वर रहेगा और संसार को अन्तिम शांति की ओर ले जाएगा।'

श्रीमती सरोजनी नायडू ने उ० प्र० के राज्यपाल पद पर रह कर जो महत्वपूर्ण कार्य किये थे, उनकी सदा बहुत-बहुत प्रशंसा की जायेगी। उ० प्र० के निवासी उनकी सेवाओं के लिए उन्हें सदा-सदा याद रखेंगे।

1948 ई० के जनवरी महीने में जब गांधीजी की हत्या की गई थी तो श्रीमती नायडू नई दिल्ली गयीं। उनका दिल रो रहा था, पर उन्होंने अपनी आंखों से आंसू गिरने न दिये। वे हिमालय की तरह मौन हो गई थीं। उन्होंने आल इण्डिया रेडियो से अपने उद्‌गारों से प्रसारित करते हुए कहा था—निजी शोक का समय बीत चुका है। छाती पीटने और बाल नोचने का समय बीत गया है। अब समय है खड़े होने और यह कहने का, 'जिन्होंने महात्मा गांधी का विरोध किया उनकी चुनौती को हम स्वीकारते हैं।'

आखिरी सांसों के क्षण

श्रीमती सरोजनी नायडू महात्मा गांधी के अस्थि-कलश के साथ विशेष रेलगाड़ी द्वारा प्रयाग गयीं। उन्होंने वहां जुलस और त्रिवेणी के तट पर अन्तिम समारोह में भी भाग लिया। लीडर के प्रतिनिधि ने जब उनसे भेंट की, तो उन्होंने कहा—गंगा-यमुना की धाराएं अनादि काल से बहती चली आ रही हैं, अनेक महान पुरुषों की भस्मियां गंगा-यमुना की धाराओं में प्रवाहित की जा

चुकी हैं, पर आज जो भस्मि प्रवाहित की गई है, उसके समान भस्मी कभी नहीं प्रवाहित की गई होगी और भविष्य में भी कभी प्रवाहित की जायेगी यह नहीं कहा जा सकता।

महात्मा गांधी की मृत्यु के पूर्व से ही सरोजनी नायडू बीमार थीं। उन्हें रक्तचाप की बीमारी थी। उनका दिल कमजोर हो गया था। गांधीजी की मृत्यु ने उनके हृदय के तंतुओं को तोड़ दिया। वे प्रयाग में ही बीमार पड़ गयीं।

श्रीमती नायडू किसी प्रकार अपने को संभालकर नई दिल्ली आयीं। वे चार दिन नई दिल्ली में रहकर लखनऊ लौट गयीं। लखनऊ पहुंचते ही वे सूखे हुए वृक्ष की तरह शैय्या पर गिर पड़ीं। उनकी चिकित्सा जितनी भी अच्छी की जा सकती थी की गई, पर कोई उन्हें रोक न सका। 1949 ई० की 2 मार्च को, अपनी सुखद स्मृतियां छोड़कर वे संसार से चली गयीं। युग आयेंगे और चले जायेंगे पर श्रीमती नायडू की पवित्र याद नई बनी रहेगी, सदा नई बनी रहेगी।

भारत-कोकिला

श्रीमती सरोजनी नायडू सारे भारत में भारत की कोकिला के नाम से प्रसिद्ध थीं। बहुत से लोग उन्हें हिन्दुस्तान की बुलबुल भी कहते थे। महात्मा गांधी स्वयं उन्हें भारत की कोकिला और हिन्दुस्तान की बुलबुल कहा करते थे। वे सचमुच कोयल की तरह चिहुंकती थीं, बुलबुल की तरह चहका करती थीं।

मुझे भी कई बार प्रयाग में उनकी कूक को सुनने का अपूर्व अवसर प्राप्त हुआ था। उनकी वाणी सचमुच कोयल की-सी थी। उनकी वाणी में रस था, गम्भीरता थी और किसी भी श्रोता को अपनी ओर खींच लेने की क्षमता थी। वे जब बोलने लगती थीं, तो उनके शब्दों से रस की निर्झरनी-सी फूट उठती थी। ऐसी

निर्झरनी, जो बिना किसी रोक-टोक के श्रोताओं को अपने साथ बहा ले जाती थी।

सच है, गांधीजी के तपोनिष्ठ व्यक्तित्व ने भारत के घर-घर में उनके संदेशों को फैलाया, पर इसके साथ-ही-साथ यह भी सच है कि उनके संदेशों को फैलाने में श्रीमती नायडू की जादुई वाणी का प्रशंसनीय योग था। वे जब अपनी सरस वाणी में सुरीले कंठों से गांधीजी के संदेशों को सुनाने लगतीं, तो सुनने वालों को ऐसा लगता, मानो कोई स्वर्ग की देवी सुना रही हो और फिर अपने प्राणों में उन संदेशों को बसा लेतीं।

गांधीजी ठीक ही कहा करते थे, सरोजनी उनका दाहिना हाथ हैं। सचमुच श्रीमती नायडू ने दाहिने हाथ की भांति ही बापू के संदेशों को घर-घर में ही नहीं जन-जन तक भी पहुंचाया।

श्रीमती नायडू का पद्य और गद्य दोनों पर एकाधिकार था। उन्होंने जो कविताएं लिखी हैं, उन्हें पढ़ने से ऐसा लगता है, उनमें सरसता और सुकुमारता का सागर भरा था। उनके भाव, उनकी कल्पनाएं और उनकी उपमाएं बहुत अनूठी थीं। वे धरती से बहुत ऊपर उठकर अपनी कविताओं का शृंगार करती थीं। ऐसा शृंगार करती थीं, जिसे देवोपम कहना ही ठीक होगा।

श्रीमती नायडू का गद्य भी कविता के समान ही सरस होता था। उनके गद्य की भाषा और उनकी भाषा के शब्द रस के प्याले ढुलकाते से जान पड़ते थे। वे अपने वाक्यों में चुन-चुनकर शब्दों को पिरोया करती थीं। उनके रसमय, भावमय, कल्पनामय और उपमाओं से भरे हुए वाक्य प्राणों में स्पन्दन पैदा कर देते थे। उनकी वाणी में, उनकी भाषा में और उनके शब्दों में जो आकर्षण था, उससे उन्हें भारत की कोकिला और हिन्दुस्तान की बुलबुल कहना ठीक ही है। भारत के लोग उन्हें सदा याद करेंगे, सदा।

●●

Indian Institute of Advanced Study
Acc. No. 77934
Date 12/3/92
SIMLA

Library IIAS, Shimla
H 028 5 R 13 S
00077934